रजि. नं. पी.बी./जे.एल.–/0011/2012-14 RNI No. 26281/74

ओ३म्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब

साप्ताहिक

आर्य मर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का प्रमुख साप्ताहिक पत्र

वर्ष–71, अंक : 11, 12/15 जून 2014 तदनुसार 1 आषाढ़ सम्वत् 2071 मूल्य 2 रु०, वार्षिक 100 रु० आजीवन 1000 रु०

ब्रह्मणस्पति की पूजा का फल

-ले० स्वामी वेदानन्द (दयानन्द) तीर्थ

स इज्जनेन स विशा स जन्मना स पुत्रैर्वाजं भरते धना नृभिः।
देवानां यः पितरमाविवासति श्रद्धामना हविषा ब्रह्मणस्पतिम्।।

-ऋ. 2/26/3

शब्दार्थ–यः =जो **श्रद्धामनाः**= श्रद्धायुक्त मन वाला **हविषा**= श्रद्धा से,त्यागभावना से, आत्मसमर्पण के भाव से **देवानाम्**= देवों के, विद्वानों के, निष्काम ज्ञानियों के **पितरम्ः**= पालक रक्षक पिता **ब्रह्मणः+पतिम्**= ब्रह्मणस्पति, लोकपालक, वेदरक्षक भगवान को **आ+विवासति**= पूरी तरह पूजता है, **सः+इत्**= वही **जनेन**= लोकसेवा द्वारा **धनाः** = धनों को **भरते**= पुष्ट करता है, **सः**= वहीं **पुत्रैः**= पुत्रों के द्वारा तथा **नृभिः**= मनुष्यों के द्वारा अथवा नेताओं के द्वारा **वाजम्**= ज्ञान, अन्न, बल तथा धनों को **भरते**= धारण करता है।

व्याख्या– इस मंत्र में भगवान् की पूजा का फल बताया गया है। भगवान को इस मंत्र में ब्रह्मणस्पति कहा गया है, किसी दूसरे मंत्र में **विश्वेषामिज्जनिता ब्रह्मणामसि** (ऋ. 2/23/2) कहा गया है। भगवान ही लोक तथा ज्ञान का उत्पादक है, वहीं उनका पालक है। जो उत्पादक है, वहीं पालक है, अतः वह अवश्य पूजने योग्य है।

हम मर्त्य हैं। आज जीते हैं, कल मर जाएंगे। फिर हमें कोई जानेगा भी नहीं। देव अमर्त्य होते हैं, शरीरनाश के साथ उनका नाश नहीं होता है। उनका यशः शरीर कभी भी शीर्ण नहीं होता। देव भी उसी से बनते हैं, वह उनका पिता है।

खाली पूजा करने आए हो या कुछ लाए भी हो? अरे गुरु के पास जाना होता है तो समित्पाणि होकर हाथ में समिधा लेकर जाते हैं। गुरुओं के गुरु के पास जाते समय पास कुछ भी नहीं, खाली हाथ जा रहे हो, कैसे पूजा करोगे?

भगवान् द्रव्य के भूखे नहीं हैं। द्रव्य=पदार्थ तो सारा उन्हीं का है। वह उन्हें क्या दोगे? अपना आपा त्यागो, उसकी हवि डालो, विवश होकर नहीं। ज्ञात हो गया है कि एक दिन यह छोड़ना होगा। इसलिये विपत्ति समझ कर मत छोड़ो, वरन् **श्रद्धामना** श्रद्धायुक्त मनवाले होकर। श्रद्धा में बड़ी शक्ति है। वेद ने कहा है–

श्रद्धया विन्दते वसु।। -ऋ. 10/151/4

श्रद्धा से धन मिलता है। सचमुच लौकिक और पारलौकिक धन श्रद्धा के बिना प्राप्त नहीं हो सकता। ब्रह्मणस्पति, धनपति को भी कहते हैं। धन की कामना है तो धनपति ब्रह्मणस्पति भगवान की पूजा करो।

भगवान् अपने धन से क्या करता है? उसने सारा का सारा धन अपनी जीव प्रजा को दे रखा है। त्याग के कारण ही भगवान धनी हैं। जो धनी होते हुये भी धन का त्याग नहीं करते वे दुःखी रहते हैं। भूख लगी है, बाजार से फल मिल सकते हैं, किन्तु कंजूस खर्चना नहीं चाहता। धन के होते हुए भी भूख से तड़प रहा है। धन दे दे, फल आदि ले ले, भूख मिट जाए, अशान्ति हट जाए। धन के त्याग से ही शान्ति मिलती है, इसलिये धनपति भगवान का उपासक बन प्राप्त करके **स इज्जनेन..भरते धना**= वह जनसेवा द्वारा धन धारण करता है, अर्थात् वह संसारी जनों को धन दे डालता है।

उसे प्रजा मिली है, उसके घर पुत्र–पौत्र के जन्म होते हैं। ऐसे दाता के पास नेता तक आते हैं। वह धन के साथ अपने पुत्र–पौत्ररूप जन भी दे डालता है, वह कमाता है त्याग के लिये। इसे **त्यागाय संभृतार्थानाम्**। (रघुवंश 1/7) =त्याग के लिये धन संग्रह की बात स्मरण है।

ब्रह्मणस्पति से उसे केवल धन ही नहीं वाज भी मिला है, ज्ञान भी मिला है। उसे भी वह दे डालता है। अर्थात भगवद्भक्त का जन, धन, ज्ञान सब परार्थ है। इससे अगले मंत्र में इस बात को बहुत खोल कर कहा गया है।

यो अस्मै हव्यैर्धृतवभिद्रविधत्प्र तं प्राचा नयति ब्रह्मणस्पतिः।
उरूष्यतीमंहसो रक्षती रिषोंहोश्चिदस्मा उरूचक्रिरभद्तः।। 4।।

जो ज्ञान–प्रकाशयुक्त श्रद्धामय त्याग से इसकी पूजा करता है, उसको ब्रह्मणस्पति आगे से, उन्नति की ओर ले जाता है। पाप की प्रबल भावना से रिस (क्रोध) से, हिंसा से उसकी रक्षा करता है। वह महान्, इस (जीव) का कार्य साधक होकर, अभूतपूर्व बना हुआ, पाप से बचाता है।

भगवान ही सबको आगे ले जाते हैं और जो भगवान की पूजा करता है वह सचमुच उन्नति प्राप्त करता है, ऊंचा उठ जाता है।

मनुष्य के अंदर पाप की प्रबल भावनाएं उठती हैं। हिंसा की इच्छा पैदा होती है, कुटिलता की कामना आती है। भगवान ही उससे बचाते हैं। वे अपापविद्ध हैं। जो उसकी शरण में जाएगा, पाप से बच जाएगा, पाप से बचने का अर्थ है दुख से बचना। जितने दुःख हैं, उन सबका कारण पाप है। कौन है जो दुःख से छुटकारा नहीं पाना चाहता। दुःख से छूटने के लिये पाप छोड़ना होगा। पाप का मूल अज्ञान है क्योंकि जानबूझ कर कोई दुख के साधनों का अनुष्ठान नहीं करता। अज्ञान ज्ञानवान की संगति से मिटेगा। इसीलिये ब्रह्मणस्पति = ज्ञानपति भगवान की उपासना का विधान किया है। उपासना और संगति एक है। उपासना=पास बैठना, संगति=एक साथ चलना। दोनों में साथ अनिवार्य है। भगवान से बढ़ कर कौन ज्ञानी है। अतः उसी की उपासना करनी योग्य है।

-स्वाध्याय संदोह से साभार

दीप से दीप जले

-ले० डा. रविदत्त शर्मा एम.ए. (वेद) आर्य समाज शामली

हमारे साथ कर्तव्यों का बन्धन सदैव लगा हुआ है। बहुत ध्यान देने पर भी उनमें से कुछ कर्त्तव्य ऐसे छूट जाते हैं जिनसे हमारे वंश का मूल उत्थान जुड़ा हुआ है। उनका निर्वाह करने से हमें विशेष लाभ तो प्रतीत नहीं होता परन्तु न करने से हानि बहुत बड़ी होती है। आगे आने वाली पीढ़ियाँ भी उसका दण्ड भोगती हैं। पाश्चात्य वातावरण में पले हुए बच्चे को यह पता नहीं कि उसकी संस्कृति क्या है ? धर्म किसे कहते हैं ? धर्म ग्रन्थ कौन-सा है तथा पारिवारिक सम्बन्धों का क्या महत्त्व है ? धर्म और संस्कृति से कर्त्तव्यों का ज्ञान होता है। धर्म के अभाव में कर्त्तव्यों का कुछ भी महत्त्व नहीं रह जाता; वैवाहिक सम्बन्धों में विच्छेद का प्रचलन इसका प्रबल प्रमाण है। छोटी-छोटी बातों पर पति-पत्नी एक-दूसरे को अपनी प्रगति में बाधा समझते हैं। वृद्धों का सम्मान तो विरले ही परिवारों में होता है। धर्म का त्याग करने पर व्यक्ति अपने आप में ही सन्तुष्ट नहीं हो पाता दूसरों को वह क्या सन्तुष्ट कर सकता है ? पारस्परिक सहयोग की भावना न्यून होने से स्वाभाविक विकास रूक जाता है। माता-पिता को यह पता नहीं कि उन्हें बच्चों के साथ कैसा वर्ताव करना चाहिये? बच्चों के लिये बड़ों के प्रति कोई कर्त्तव्य नहीं रह गया है। वृद्धों को भी वृद्धावस्था में पारिवारिक मोह बढ़ता जाता है। परिणामस्वरूप वे अधिक तिरस्कृत होते हैं आश्रम व्यवस्था प्राय: लुप्त हो चुकी है, पारिवारिक विसंगति का सबसे बड़ा कारण यही है। जिस बच्चे के जीवन में आरम्भ से ही बनावट आ गयी है वह वास्तविकता से सदैव दूर रहता है। हमारे आर्य पारिवारों में वैदिक परम्पराएँ विकृत हो चुकी हैं और हम विकासवाद के मद में फूले नहीं समाते।

इस अनदेखी का भयंकर परिणाम प्रत्येक को भोगना पड़ रहा है। परिवारों में समस्याएँ इतनी बढ़ती जा रही हैं कि उनका समाधान करने में सारी आयु लग जाती है। व्यस्तता इतनी बढ़ गयी है कि समस्याओं के मूल तक पहुँचने का अवसर नहीं मिलता। यदि हम विचार करें तो अपने को ही दोषी पायेंगे। आगामी पीढ़ी के मार्गदर्शन की कोई व्यवस्था नहीं है। यह भूल बढ़ती ही जा रही है। प्रदर्शन की दृष्टि से सब कुछ ठीक है परन्तु मौलिक रूप से हमारे पास कुछ नहीं है। दिशाहीन होने का कारण शिक्षा का अभाव है। शिक्षा दो माध्यमों से मिलती है; एक घर में माता-पिता से दूसरे विद्यालय में अध्यापक से। माता-पिता धार्मिक कृत्यों को तथा सांस्कृतिक कार्यक्रमों को ठीक प्रकार से सम्पन्न करते हैं तो बच्चे स्वत: ही सीख जाते हैं। जिस घर में नमस्ते नहीं की जाती हो तो बच्चे कैसे जानेंगे कि उन्हें नमस्ते करनी है ? माता-पिता को यदि अभिवादन के नाम पर हाथ जोड़ना नहीं आता तो बच्चों का क्या दोष है, वे जैसा देखेंगे वैसा करेंगे। घर में स्वाध्याय की पुस्तक नहीं, कोई धार्मिक ग्रन्थ नहीं, किसी महापुरुष की जीवनी नहीं। चित्र हैं तो सिनेमा वाले, पुस्तकें हैं तो अपराध की प्रवृत्ति को बढ़ावा देने वाली। इस विषैली व्यवस्था से कोई परिवार ही क्या होगा। कभी सत्संग नहीं होता, परिवार में विद्वान् का पदार्पण नहीं होता, धार्मिक वार्ता नहीं होती तो फिर कौन किससे सीखे ?

आज विकल्प में अधिक विश्वास है। धर्म का विकल्प करनी है तो धर्म को अलग रखना भी एक विकल्प है। आर्यत्व का विकल्प हिन्दुत्व और हिन्दुत्व का विलय पाश्चात्य या दूषित विचारधारा में हो गया है। आज का विकल्प कल है, यदि आज हमारे धार्मिक कृत्य सम्पन्न नहीं हो पाये तो कल हो जायेंगे, अभी बहुत आयु शेष है, आरम्भ से ही धर्म के पचड़े में पड़ना ठीक नहीं है। धर्म की उन्नति पिछड़ेपन का प्रतीक बन गयी है। परिधान-भाषा-रहन-सहन का भी विकल्प है। हमारी अपनी कोई भाषा नहीं। आज अनुभव होता है कि लार्ड मैकाले स्वामी दयानन्द की अपेक्षा अधिक सफल हुआ और स्वामी दयानन्द का भी विकल्प वही बन गया। महर्षि ने ज्ञान की ज्योति जगायी थी जिसे बुझाने के लिये बड़ी-बड़ी शक्तियाँ लगी हुई हैं।

आज सारी परिभाषाएँ परिवर्तित की जा रही हैं, अपनी जिम्मेदारी से हम जितना बच सकें वैसी ही परिभाषा हम बना लेते हैं। प्रत्येक व्यक्ति केवल अपने विषय में चिन्तित है, परिवार-समाज-राष्ट्र कहीं भी चला जाय। हमारा व्यक्तित्व खूब उभरे, हम इसीलिये जीते हैं, चाहे इसके बदले में राष्ट्र का भी बलिदान हो जाय। हमारी अपनी आवश्यकताएँ ही चिन्तन और स्वार्थपूर्ति ही हमारा धर्म है। हम अपने परिवार से परामर्श करना ठीक नहीं समझते, हो सकता है हमारी आवश्यकताओं को सीमित करने की बात आ जाय। यह प्रवृत्ति पारिवारिक विघटन का कारण बनी हुई है। प्रत्येक परिवार की कुछ विशेषता या कुछ पहचान होनी चाहिये; किसी की दान से; किसी की अतिथि सत्कार से; किसी की सत्संग से तो किसी की परोपकार से प्रसिद्धि होनी चाहिये। कोई परिवार याज्ञिक हो, जहाँ लोग यज्ञ की दीक्षा लेने आवें और यज्ञ के महत्त्व को समझें। बहुत से परिवार ऐसे हों जिनका राष्ट्र के लिये विशेष योगदान हो।

हमारा कर्त्तव्य होता है कि ऋषियों के द्वारा जलाया ज्ञान का दीपक बुझने न पावे। हमने बहुत कुछ सीखा परन्तु दूसरा दीपक जलाने में असमर्थ रहे। ऋषियों के द्वारा दिये गये कार्यक्रमों को हम अपना न सके। पञ्चमहायज्ञों के अन्तर्गत सब कुछ आ जाता है परन्तु गृहस्थ निष्क्रिय हो गये और मात्र उदरपूर्ति ही जीवन का लक्ष्य बनकर रह गया। नयी पीढ़ी का निर्माण गृहस्थ में ही होता है। यदि गृहस्थ में ज्ञान चर्चा नहीं होती तो नयी पीढ़ी अज्ञानान्धकार में भटकेगी। यह सूक्ति है 'अग्निनाग्नि: समिध्यते' ज्योति से ज्योति (अग्नि-अग्नि) जलायी जाती है। इस क्रम को हमने अपनाया नहीं। परिवार का एक व्यक्ति भी यदि इस ओर ध्यान दे तो पूरा परिवार उससे लाभान्वित हो सकता है। ऋषियों के जो कर्त्तव्य थे वे हमारे भी होते हैं, हम इस दायित्व से बचने की कोशिश करेंगे तो संसार में घोर अन्धेरा छा जायेगा। प्रकाश ऋषियों ने फैलाया हमें भी फैलाना है। ऋषियों ने अग्नि की उपासना की है हमें भी करनी है

अग्नि: पूर्वेभिर्ऋषिभिरीडयो नूतनैरूत।
स देवाँ एह वक्षति।।

-ऋ० १.१.२

उपनिषद् तथा वेदान्त दर्शन अध्ययन का स्वर्णिम अवसर

अध्यात्म जगत् में उपनिषद् एवं वेदान्तदर्शन ग्रन्थ का महत्वपूर्ण स्थान है। उप = समीप, नि = निश्चय से, षद् = बैठना। उपनिषद् का अर्थ हुआ आत्मा परमात्मा के समीप बैठने = जानने की विद्या। प्रत्येक उपनिषद् में आत्मा-परमात्मा के विषय में विशेष चर्चा के साथ-साथ मनुष्य जीवन का लक्ष्य, उद्देश्य, उस लक्ष्य की प्राप्ति के उपाय, विधि-विधान, साधक-बाधकों की विस्तृत चर्चा, योगी के लक्षण (आचरण) अध्यात्म-साधना (योगाभ्यास) का महान् लाभ अध्यात्म रहित का परिणाम आदि का वर्णन है, जिसको पढ़कर अध्यात्म पिपासु आनन्द से गद्गद हो जाता है।

वैसे ही वेदान्तदर्शन में ब्रह्मा (परमात्मा) का महत्व तथा उसके विशेष नाम व गुणों की व्याख्या के साथ-साथ मोक्ष का महत्व व विवरण है। वेदान्त (वेद + अन्त) वेदों का सार कहा जाता है।

वानप्रस्थ साधक, आश्रम, आर्यवन, रोजड़ में पिछले एक वर्ष से शिक्षा अष्टाध्यायी, व्याकरण आदि वेदाङ्ग एवं योगदर्शन, न्यायदर्शन आदि उपाङ्गों का अध्ययन-अध्यापन ऋषि प्रणाली से चल रहे हैं। इसी श्रृंखला में आध्यात्मिक उन्नति का अनुपम तथा साधना के रहस्यमय ग्रन्थ ग्यारह उपनिषद् एवं तत्पश्चात् सम्पूर्ण वेदान्तदर्शन (ब्रह्मसूत्र) का ऋषि पद्धति से वेदानुकूल व्याख्या सहित नियमितरूप से स्वामी मुक्तानन्द परिव्राजक (व्याकरणाचार्य, दर्शनाचार्य) द्वारा वानप्रस्थ साधक आश्रम में आगामी आषाढ पूर्णिमा (१२ जुलाई २०१४) से अध्यापन कराया जाएगा।

इन ११ उपनिषदों व वेदान्तदर्शन अध्ययन में लगभग ८-६ मास लगेंगे। इसके साथ-साथ प्रतिदिन सन्ध्या, हवन, आत्मनिरीक्षण, समय-समय पर अनेक मूर्द्धन्य विद्वानों के दार्शनिक प्रवचन एवं योगनिष्ठ गुरुवर्य पूज्य स्वामी सत्यपति जी का सान्निध्य, प्रेरणा व उपदेश भी प्राप्त होगा। संस्कृत से अनभिज्ञ विद्यार्थियों को साथ-साथ संस्कृत पढ़ाने की व्यवस्था भी रहेगी। अधिकतम दश (प्रथम आवेदन के आधार पर) विद्यार्थियों को अवसर प्राप्त होगा। गुरुकुलीय दिनचर्या, पूर्ण अनुशासन, योगाभ्यास व आध्यात्मिक ग्रन्थ अध्ययन में रुचि रखने वाले विद्यार्थी अपना पूर्ण परिचय, नाम, आयु, पता, दूरभाष संख्या, शैक्षणिक योग्यता आदि Vaanaprastharojad@gmail.com पर ३० जून तक भेजें अथवा व्यवस्थापक, वानप्रस्थ साधक आश्रम, आर्यवन, रोजड़, पो. सागपुर, जि. साबरकांठा, गुजरात-३८३३०७ पर पत्रव्यवहार करें। सायं ०७:३० से ०८:०० बजे +919426408026 में सम्पर्क करें। **-व्यवस्थापक**

सम्पादकीय.....

सुखपूर्वक जीना भी एक कला है

स्वास्थ्य मनुष्य की अमूल्य निधि है और इसीलिए हमारे प्राचीन ऋषियों ने कहा है-धर्मार्थिकाममोक्षाणाम् आरोग्यं मूलकारणं। अर्थात् धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति हेतु उत्तम स्वास्थ्य का होना आवश्यक है। उत्तम स्वास्थ्य की परिभाषा का वर्णन सुश्रुत ने किया है कि जिसके वात, पित्त, कफ सम्यक् अवस्था में हों, जठराग्नि उचित रूप से कार्य करती हो, रसरक्तादि सातों धातुएं समुचित मात्रा में बनती हो, मलमूत्रादि का विसर्जन भली प्रकार से होता हो, दशों इन्द्रियां अपना कार्य करने में सक्षम हो, मन हर समय प्रसन्न रहे , वह व्यक्ति स्वस्थ कहा जाता है। इसी प्रकार महर्षि पतजंलि ने भी उत्तम स्वास्थ्य की परिभाषा इस प्रकार से दी है कि सुन्दर मुखाकृति, शरीर के प्रत्येक अंग दर्शनीय और वज्र के समान सुदृढ़ और परिपुष्ट होना उत्तम स्वास्थ्य की परिभाषा है।

अब देखना है कि शरीर को स्वस्थ और सुदृढ़ रखने के लिए हमें किन-किन नियमों का पालन करना चाहिए। हमारे शरीर की तुलना एक इंजन से की जाती है। जिस प्रकार इंजन के लिए कोयला, पानी और भाप की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार हमारे शरीर को सक्रिय रखने के लिए उत्तम पौष्टिक, भोजन, स्वच्छ जल और शुद्ध वायु की आवश्यकता होती है। अतः सबसे पहले तो हमें अपने खान-पान की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए। भूख लगने पर भोजन करें और समय पर करें। भोजन हमेशा पौष्टिक एवं सन्तुलित होना चाहिए। उत्तम जल और शुद्ध वायु का सेवन करो।

जीवन को सुखपूर्वक बिताने के लिए हमारे ऋषि मुनियों ने धर्मग्रन्थों में स्थान-स्थान पर मानव के पथ प्रदर्शन हेतु कई आदर्श बातों की ओर संकेत किया है। योगदर्शन में कहा कि शरीर की रक्षा हेतु यम नियमों का पालन करो। यम पांच हैं- अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह। इसी प्रकार नियम भी पांच बताए गए हैं- शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्रणिधान। इनका पालन करने से मनुष्य सुखपूर्वक जीवन बिता सकता है। आगे चलकर मनु महाराज ने भी मनुस्मृति में जो धर्म के दस लक्षण बताए हैं उन पर भी हमें चिंतन और मनन करना चाहिए-

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रिय-निग्रह।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधः दशकं धर्म लक्षणम्।।

अर्थात् धैर्य, क्षमा, दमन, चोरी न करना, पवित्रता, इन्द्रिय निग्रह, बुद्धि, विद्या, सत्य, क्रोध न करना सभी धर्म के लक्षण हैं। उपरोक्त सभी बातों का सार यही है कि सत्य बोलो, अहिंसा व्रत का पालन करो। आपकी करनी और कथनी में फर्क न हो। त्यागी बनो, सन्तोषी बनो, परिश्रमी बनो और ब्रह्मचर्य व्रत का पूर्णरूपेण पालन करो। नित्यप्रति स्वाध्याय कर उन्नति के पथ की ओर अग्रसर रहो। काम, क्रोध, लोभ और मोह का हमेशा के लिए परित्याग करो। किंतु यह तभी सम्भव है जब आपका परमपिता परमात्मा पर पूर्ण विश्वास हो। परमात्मा भी उसी की रक्षा करता है जो अपनी रक्षा करने में स्वयं भी समर्थ हो। इन सबका पालन करना सुखपूर्वक जीवन जीने के लिए आवश्यक है।

परमपिता परमात्मा ने न जाने किन शुभ कर्मों के फलस्वरूप हमें इतना अमूल्य मानव तन दिया है जिसका मूल्यांकन करना कठिन है। परन्तु आज का मनुष्य सुखपूर्वक जीवन जीने की अपेक्षा दुखपूर्वक जीवन जी रहा है। आज मनुष्य पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव में आकर अपनी सभ्यता संस्कृति और मर्यादाओं को भूल चुका है। आज के मनुष्य ने अपनी आवश्यकताओं को इतना बढ़ा लिया है कि उसकी पूर्ति न होने पर वह दुःखी हो जाता है। पश्चिमी सभ्यता के प्रभाव में आकर मनुष्य भोगवाद की ओर अग्रसर हो रहा है। हमारी संस्कृति में शिक्षा दी जाती है कि त्यागपूर्वक भोग करो। लालच मत करो, परन्तु आज मनुष्य लोभ लालच में पड़कर अपने इस मनुष्य जीवन को बर्बाद कर रहा है। इसी कारण मनुष्य भौतिक सम्पत्ति को ही अपने जीवन का उद्देश्य समझ बैठा है। आज संसार में जो अशान्ति दिखाई देती हैं उसका मूल कारण यही है कि मनुष्य ने केवल खाना-पीना, भोग विलासपूर्वक जीवन जीने को ही अपने जीवन का लक्ष्य बनाया है। इसी का परिणाम है कि आज अनेक प्रकार की बुराईयां समाज में फैल रही हैं। अपनी इच्छाओं को पूर्ण करने के लिए मनुष्य किसी भी हद तक जाने को तैयार है चाहे उसके लिए कितने ही अनैतिक और असभ्य कार्य क्यों न करना पड़े। आज भौतिक सुख पाने की इच्छा में, धन सम्पत्ति प्राप्त करने के लिए मनुष्य इंसानियत को भुला बैठा है। हमारे ऋषियों ने त्यागपूर्वक जीवन जीने का उपदेश दिया है। हमारी संस्कृति वेद के आधार पर मनुष्यों को उपदेश देती है कि इस संसार में जो कुछ भी हमें प्राप्त हो रहा है वह सब परमात्मा द्वारा दिया हुआ है। इसलिए मनुष्य को इन पदार्थों को त्याग की वृत्ति के द्वारा धारण करना होगा। इसलिए मनुष्य को नित्य प्रति परमात्मा से शुभ गुणों को प्राप्त करने की प्रार्थना करनी चाहिए। महाभारत में कहा है-

स्रवन्ति न निवर्तन्ते स्रोतांसि सरितामिव।
आयुरादाय मर्त्यानाम् रात्र्यहानि पुनः-पुनः।।

अर्थात् नदी के स्रोत बहते चले जाते हैं, फिर लौट कर नहीं आते। उसी प्रकार मनुष्य की आयु के जो वर्ष और मास बीत जाते हैं वे फिर लौट कर नहीं आएंगे।

सुखपूर्वक जीवन जीना एक कला है। मनुष्य को इसे सीखना चाहिए। वेद में मनुष्य को कहा गया है कि सौ वर्ष तक जिओ, सौ वर्ष तक देखो, सौ वर्ष तक सुनो, परन्तु किसी के अधीन हो कर नहीं, अपने बल पर जिओ। आपकी ज्ञानेन्द्रियां तथा कर्मेन्द्रियां आपके वश में हो। आपके मन में हमेशा उज्ज्वल भविष्य की कामनाएं जागृत हों। ऐसा प्रयत्न करने पर ही मनुष्य सुखपूर्वक जीवन जीना सीख सकता है। वेद के द्वारा बताई गई त्यागमय संस्कृति को अपनाकर ही मनुष्य सुखी हो सकता है। अपनी कामनाओं, इच्छाओं तथा वासनाओं पर काबू पाकर ही मनुष्य अपने जीवन को सुखमय बना सकता है। जो वासनाओं के वशीभूत होकर अनैतिक कार्य करता है वह अपने इस मनुष्य जीवन को बर्बाद करके दुखमय जीवन व्यतीत करता है। इसलिए मनुष्य को हमेशा शुभ संकल्पों को धारण करते हुए अपना जीवन को श्रेष्ठ बनाना चाहिए।

-प्रेम भारद्वाज संपादक एवं सभा महामन्त्री

मृत्यु से भय क्यों?

-ले० श्री सुरेश शास्त्री सभा कार्यालय जालन्धर

महाभारत में यक्ष के प्रश्न का उत्तर देते हुए महाराज युधिष्ठिर ने कहा- प्रतिदिन ही प्राणी अन्य प्राणियों को मरता देखकर भी स्वयं कभी मरना नहीं चाहता, यही संसार का सबसे बड़ा आश्चर्य है। अर्थात् मानव में अनन्त जिजीविषा अत्युत्कट रूप में विद्यमान रहती है, इसीलिए वह सदा सोते-जागते, उठते-बैठते मौत से भयभीत रहता है। सदा भयभीत और सावधान रहने से भी यह मौत कभी टलती नहीं। इस भय से मुक्ति तो मृत्यु की वास्तविकता को जान लेने से ही मिल सकती है। उसकी अपरिहार्यता और वास्तविकता को जान कर ही जो व्यक्ति मौत के भय को जीत लेता है, वही मृत्युञ्जय कहलाता है। चेतन आत्मा का प्रभुप्रदत्त इन्द्रिय समूह से पृथक होना ही मृत्यु है। मृत्यु भय से मुक्त होने के लिए यदि हम वेदादि सद् ग्रन्थों का मनन करें तो विश्वास हो जाता है कि मौत प्राणी की अवश्यम्भावी है। गीता के द्वितीय अध्याय में एक श्लोक आया है-

जातस्य हि ध्रुवो मृत्युध्रुवं जन्म मृतस्य च।

तस्मादपरिहार्ये अर्थे न त्वं शोचितुमर्हसि।।

उत्पन्न हुए कि मृत्यु और मरे हुए का जन्म निश्चित है। अतः इस अटल बात पर शोक करना व्यर्थ है। जन्म और मृत्यु दोनों ही चिरंतन सत्य है, शाश्वत है। प्रातःकाल बाग में सुन्दर फूल खिलते हुए दिखाई देते हैं और सांयकाल तक मुरझा जाते हैं। बसन्त की बहार कितनी आनन्ददायक होती है किंन्तु वह भी सदा नहीं रह पाती। यह संसार परिवर्तनशील है। सुख के बाद दुःख, सर्दी के बाद गर्मी, संयोग के साथ वियोग और जन्म के साथ मृत्यु अवश्यभावी है।

इसी जन्म मरण के रहस्य को जानने के लिए नचिकेता आचार्य यम के पास गया था। ऋषि उस समय घर पर नहीं थे। उनकी प्रतीक्षा में नचिकेता तीन दिन और तीन रात भूखा प्यासा उनके द्वार पर पड़ा रहा। जब ऋषि आए तब बड़ी उत्सुकता के साथ कहता है, महाराज मैं मृत्यु का रहस्य जानने के लिए आपकी सेवा में उपस्थित हुआ हूं। मृत्यु क्या चीज है? क्यों मनुष्य उससे उतना भयभीत होता है? इस आवागमन के चक्कर से कैसे बचा जा सकता है? आचार्य यम नचिकेता की जिज्ञासा पर बड़े प्रसन्न हुए परन्तु उन्होंने कहा-वत्स संसार में एक से बढ़कर एक सुख और ऐश्वर्य के साधन विद्यमान हैं, तुम मृत्यु का रहस्य जानकर क्या करोगे? कुछ और चीज माँगो। प्रत्युत्तर में नचिकेता कहता है- महाराज सांसारिक सुख साधन तो क्षणभंगुर हैं, मैं उनके जाल में नहीं फंसना चाहता। मैं तो अमर जीवन का इच्छुक हूं। उस समय नचिकेता को आचार्य यम ने जो उपदेश दिया वह स्मरण रखने योग्य है।

आचार्य यम कहते हैं नचिकेता मृत्यु उसी की होती है जिसका जन्म होता है और जन्म पांच तत्त्वों से बने इस शरीर का होता है। इस शरीर को धारण करने वाली जो आत्मा है, वह तो अजर-अमर है। कठोपनिषद में मंत्र आता है-

न जायते म्रियते वा विपश्चित्, नायं कुतश्चित् न बभूव कश्चित्। अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो, न हन्यते हन्यमाने शरीरे।।

अर्थात् यह आत्मा न पैदा होती है, न मरती है, न किसी कारण से उत्पन्न हुआ है और न ही स्वतः ही निर्मित हुआ है। यह नित्य शाश्वत और प्राचीन है। शरीर के नष्ट होने पर भी आत्मा नष्ट नहीं होती। बचपन जवानी और बुढापा आदि इस शरीर के विकार हैं, आत्मा के नहीं। जब शरीर जीर्ण हो जाता है और मरणासन्न अवस्था में पहुंच जाता है, तब उस अवस्था में आत्मा उस जीर्ण शरीर को छोड़कर नए निरोग शरीर में प्रवेश कर लेता है। गीता में इस बात को बड़े ही उचित ढंग से समझाया गया है-

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय, नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि।

तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्यन्यानि संयाति नवानि देही।।

अर्थात् जैसे मनुष्य पुराने वस्त्रों को त्याग कर नए वस्त्रों को धारण करता है वैसे ही जीवात्मा पुराने शरीर को त्याग कर नए शरीर में प्रवेश करता है। जो ज्ञानी पुरूष इस रहस्य को जान लेते हैं, वे मृत्यु से भयभीत नहीं होते अपितु मृत्यु का स्वागत करते हैं। जैसे पका हुआ खरबूजा अपने वृन्त से स्वतः ही छूट जाता है, उसे जबरदस्ती नहीं छुडाना पड़ता है, ठीक वैसे ही मनुष्य अपने शुभ कर्मों के द्वारा मृत्यु के बन्धन से छूट जाता है। महर्षि दयानन्द के जीवन का अन्तिम दृश्य देखकर पता चलता है कि उन्होंने मृत्यु पर विजय प्राप्त की थी। रोम-रोम में विष व्याप्त हो रहा है, भयंकर पीड़ा है किंतु मुख से आह नहीं निकलती। वह दिव्य पुरूष आई हुई मृत्यु को देखकर कहता है- परमात्मदेव तेरी इच्छा पूर्ण हो और अपने प्राणों को छोड़ देते हैं। ऐसे अनेकों उदाहरण हैं जिनसे यह प्रकट होता है कि वास्तव में मृत्यु दुखकारी नहीं सुखकारी है। शरीर के अन्दर कैद हुए आत्मा का विश्रामस्थल यह मौत ही है। मृत्यु कष्टदायक उसे प्रतीत होती है जो लोभ मोह के वशीभूत होकर संसारिक बन्धनों में ऐसा जकड़ जाता है कि अन्तिम समय में उनसे बिछुड़ना कठिन होता है। विषयों के वशीभूत होकर अपने रहने के लिए यहां बड़े-बड़े महलों का निर्माण करता है, अनेकों सुख के साधन जुटाता है। येन केन प्रकारेण लाखों की सम्पत्ति का संचय करता है। अपने परिवार की वृद्धि को देखकर उसके आनन्द की सीमा नहीं रहती किंतु अन्तिम समय में जब मौत आकर द्वार खटखटाती है तब वह तड़प उठता है और मृत्यु के ड़र से भागने लगता है। ऋषियों ने मनुष्य के पथ प्रदर्शन हेतु दो मार्ग निर्धारित किए हैं। एक प्रेय मार्ग और दूसरा श्रेयमार्ग। अज्ञानवश मनुष्य प्रेय मार्ग को अपनाकर दुःख उठाता है। श्रेयमार्ग कल्याण पथ का प्रदर्शक है। श्रेयमार्ग पर चलकर मनुष्य अपने जीवन के लक्ष्य को प्राप्त करता है। श्रेय मार्ग पर चलते हुए मनुष्य को हमेशा याद रखना चाहिए कि-

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किंचिज्जगत्यां जगत्।

तेन त्यक्तेन भुंजीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्।।

अर्थात् यह सब भोग्य पदार्थ प्रभु ने दिए हैं इन पर हमारा केवल प्रयोग का अधिकार है, स्वामित्व का नहीं। संसार के पदार्थों का उपयोग तो करना चाहिए किंतु लालचवश होकर अपना अधिकार नहीं जमाना चाहिए। किसी कवि ने कहा है-

धनानि भूमौ पशवश्च गोष्ठे, नारी गृहद्वारि सखा श्मशाने।

देहश्चितायां परलोक मार्गे, धर्मानुगो गच्छति जीव एकः।।

अर्थात् धन धरा में ही दबा रह जाएगा, पशु पशुशाला में बंधे रह जाएंगे, नारी का साथ घर के द्वार तक ही होगा, मित्रमण्डली और सगे सम्बन्धी श्मशानभूमि तक जाएंगे, यह शरीर भी चिता की भेंट हो जाएगा, केवल तेरे किए शुभ कर्मों ने ही तेरे साथ जाना है। इसलिए सदैव शुभकर्मों का संचय करो। श्रेय मार्ग का पथिक मनुष्य साधना के मार्ग को अपनाता है और मृत्यु के भय से छूट जाता है। इस प्रकार सदा सात्त्विक जीवन बिताकर, स्थितप्रज्ञ बनकर, संसारिक पदार्थों पर अपना केवल प्रयोगमात्र का अधिकार मानकर और श्रेयमार्ग का पथिक बनकर मनुष्य मृत्यु के भय से मुक्ति पा सकता है।

केवल पुस्तकीय ज्ञान नहीं उत्तम उपदेश भी आवश्यक

-ले० डा. अशोक आर्य 104 शिप्रा अपार्टमेन्ट, कौशाम्बी

आज का अध्यापक आज के विश्वविद्यालय का एक निश्चित पाठ्यक्रम लेकर चलता है। उसका एक निश्चित उद्देश्य होता है कि येन केन प्रकारेण दिये गए पाठ्यक्रम को पूरा करना। इस पाठ्यक्रम को पूरा करना ही वह अपने कर्तव्य की इति श्री समझ लेता है। इस का परिणाम यह होता है कि आज के विद्यार्थी को किताबी कीड़ा बना दिया गया है। उसके आचार विचार की पवित्रता की ओर किसी का कोई ध्यान नहीं होता। यह हमारी आज की शिक्षा की एक बहुत बड़ी समस्या है। इस समस्या का जितना समाधान खोजने का प्रयास हुआ है, उतना ही यह समस्या विकराल होती चली जा रही है। इसका कारण यह है कि यदि हम ने दिल्ली जाना है तो गाड़ी भी दिल्ली की ही पकड़नी होगी। यदि हम दिल्ली जाने के लिए बठिंडा से श्री गंगानगर की गाड़ी पकड़ लेंगे तो दिल्ली नहीं पहुँच सकते।

यह ही समस्या है हमारी शिक्षा के क्षेत्र में कोई समाधान खोजने की। परमपिता परमात्मा ने जीव मात्र के कल्याण के लिए जो आदि ज्ञान का कोष हमें वेद में दिया है, यह वेद ही हमें कुछ न कुछ समाधान दे सकता है। अत: यदि हम वास्तव में ही इस समस्या का कोई समाधान चाहते हैं तो हमें वेद की शरण में ही जाना होगा। वेद में सब समस्याओं का समाधान दिया गया है।

हमारी प्रस्तुत समस्या का समाधान यजुर्वेद अध्याय ६ के मन्त्र संख्या १४ में बहुत ही सुंदर विधि से दिया है। इस मन्त्र का अवलोकन करें, इस पर मनन चिंतन करे तथा इसे व्यवहार में लायें तो निश्चय ही हम इस समस्या का समाधान पा कर, इसे दूर करने में सफल होंगे। मन्त्र हमें उपदेश करता है कि

वाचं ते शुन्धामि प्राणं ते शुन्धामि चक्षुस्ते शुन्धामि श्रोत्रं ते शुन्धामि

नाभिं ते शुन्धामि मेढं ते शुन्धामि पायुं ते शुन्धामि चरित्रांस्ते शुन्धामि।। -यजु,६.१४।।

मन्त्र उपदेश कर रहा है कि मैं अर्थात आचार्य उत्तम शिक्षा के द्वारा तेरी वाणी, प्राण, चक्षु, कर्ण, नाभि, उपस्थेन्द्रिय, गुदा-मलद्वार, इन सब को पवित्र करता हूँ। यह सब नैतिक शिक्षा का भाग है। जब बालक ज्ञान पाने के लिए गुरुकुल में प्रवेश करता था, तो सर्व प्रथम उसे अपना शरीर व अपने शरीर के सब अंग पवित्र बनाने के लिए आचार्य उपदेश करते थे। पवित्रता के इस उपदेश के अंतर्गत उसे कहा जाता था कि हे ब्रह्मचारी ! तू इस गुरुकुल में उत्तम शिक्षा पाने आया है। इसलिए यहाँ रहते हुए अपने आचार विचार तथा व्यवहार को शुद्ध रखना होगा। तब ही प्रभु का पवित्र ज्ञान तुझे मिल सकेगा।

प्रभु के इस पवित्र ज्ञान को पाने के लिए यह आवश्यक है कि अपनी वाणी को पवित्र बना। इस वाणी से किसी का बुरा मत कर। यह वाणी प्रभु ने तुझे दी है ताकि तू इसके पवित्रता पूर्ण प्रयोग से अपना यश बढ़ा सके। इसके लिए इस वाणी में मिठास लाना ही उत्तम है। वाणी के साथ ही साथ अपने चक्षु तथा अपने कानों को भी पवित्र बना। आँखों से सब कुछ पवित्र, सुंदर देखेगा तथा कानों से पवित्र ही सुनेगा तो तेरे में ऐसी शक्ति आवेगी कि तू कभी किसी के बुरे के लिए अपने मुख से एक भी बुरा शब्द नहीं निकाल सकेगा तथा किसी के बुरे शब्द को तेरे कान नहीं सुनेंगे। इस प्रकार ही इस शरीर का केंद्र तेरी नाभि तथा उपस्थेंद्रिय व मलद्वार तुझे पवित्र बनाने के लिए तेरे अंदर की सब गंदगी बाहर कर देते हैं। इस प्रकार अपने शरीर के इन सब अंगों से अपने शरीर की सब कालिमा निकाल कर इसे पवित्र बना।

इस उपदेश से यह तथ्य सामने आता है कि आज के शिक्षक जो यह समझते हैं कि उनका कर्त्तव्य तो केवल पुस्तकीय ज्ञान देना मात्र ही है, अन्य कुछ नहीं। यह ठीक है कि आज के शिक्षक को जो कार्य दिया गया है, उस के साथ इस नैतिक शिक्षा का कोई सम्बन्ध नहीं रह गया क्योंकि आज नैतिक शिक्षा के अध्यापक की अलग से व्यवस्था की जाती है। इस कारण अध्यापक को अपने विषय के अतिरिक्त कुछ भी ज्ञान देने की आवश्यकता नहीं अनुभव होती। हो भी क्यों, क्योंकि वह अध्यापक है, मास्टर है किन्तु गुरु नहीं आचार्य नहीं। जहां अध्यापक अपने विद्यार्थी के लिए केवल एक ही विषय के लिए होता है किन्तु गुरु या आचार्य तो अपने शिष्य का सर्वांगीण विकास चाहता है। यह उसका नैतिक कर्त्तव्य भी है, उद्देश्य भी है, आचार भी है तथा व्यवहार भी है।

गुरु का उद्देश्य अपने शिष्य के आचरण को अपने उपदेश के माध्यम से शुद्ध करना होता है, उसके सब अंगों को पवित्र करना होता है। वह अपने शिष्य को सदाचारी बनाने के लिए कार्य करता है। इस वेद मन्त्र में विद्यार्थी की सच्चरित्रता पर अत्यधिक बल दिया गया है। आज के विद्यार्थी में नैतिक कमियों का कारण आज की आचरण हीन शिक्षा ही है। इस कारण ही आज का विद्यार्थी समाज के सामने एक समस्या बन कर रह गया है। यदि हम इस समस्या का समाधान चाहते हैं तो हमें निश्चय ही वेद की शरण में जाना होगा तथा विद्यार्थी को शिष्य बनाकर अपने उत्तम आचरण को अपने इस शिष्य के जीवन में डालना होगा तब ही सुशिक्षा का उद्देश्य हमें प्राप्त हो सकेगा।

मुम्बई में आदर्श जीवन-निर्माण शिविर सम्पन्न

आर्य प्रतिनिधि सभा मुम्बई के तत्वावधान में आर्य वीर दल मुम्बई ने ''आदर्श जीवन निर्माण शिविर'' का आयोजन रविवार दि. 11 से रविवार दि. 18 मई 2014 तक आर्य समाज सान्ताक्रुज़ में किया। यज्ञ के उपरान्त शिविर का उद्घाटन एवं ध्वजारोहण प्रसिद्ध उद्योगपति एवं आर्य श्रेष्ठी श्री लद्धाभाई विश्राम पटेल, घाटकोपर के करकमलों से हुआ। इस शिविर के मुख्य शिक्षक श्री धर्मेन्द्र आर्य मुम्बई, श्री प्रशान्त आर्य अलीगढ़ एवं श्री हरेन्द्र आर्य मुजफरनगर थे। मुम्बई के सभी आर्य समाजों के कर्मठ कार्यकर्ताओं ने सक्रिय रूप से भाग लेते हुए बच्चों का उत्साहवर्धन किया। आदर्श जीवन निर्माण शिविर के अन्तर्गत शारीरिक, आत्मिक व बौद्धिक उन्नति के लिए अनेक विद्वानों को आमन्त्रित करके विभिन्न विषयों पर मार्ग दर्शन दिया गया यथा-उत्तम विद्यार्थी बनाना, स्मरणशक्ति बढ़ाना, व्यक्तित्व विकास, आत्मविश्वास पैदा करना, तनाव से मुक्ति, योग प्राणायाम, ध्यान, आसन, स्वस्थ निरोग रहने के प्रभावी सूत्रों पर तथा सैद्धान्तिक, सारगर्भित एवं प्रभावोत्पादक प्रवचनों से शिविरार्थियों को लाभान्वित किया गया।

जिसमें श्री संदीप आर्य सान्ताक्रुज, श्री राजीव शुक्ला चेम्बूर, श्री तारा सिंह मीरा रोड़, श्री सन्दीप गुप्ता गोरेगॉव, श्रीमति अरूणा परेश पटेल बोरिवली, ब्र. अरूण कुमार ''आर्यवीर'' सानपाड़ा, डा. निकेश घाटकोपर, श्रीमति निर्मला मलाड, श्री दिलीप वेलाणी खारघर, श्री राजन खन्ना पवई, डा. स्मिता त्रिवेदी गोरेगॉव ने भाग लिया।

विशेष रूप से इस बार शिविरार्थियों को समता नगर कान्दिवली के देववन पार्क में नरेन्द्र शास्त्री संचालक एवं कर्मठ कार्यकर्ता श्री सन्दीप गुप्ता जी के नेतृत्व में भ्रमण के लिए लेकर गये वहीं श्रीमति एवं श्री अफजल खत्री ने सभी शिविरार्थियों को पर्यावरण संरक्षण के बारे में जानकारी दी जिसमें बहुत कुछ सीखने को मिला। राष्ट्रीय उद्यान बोरिवली का भी भ्रमण किया।

इक ओ३म् दा सहारा रख बंदिया....

-ले० पं. बनारसी दास आर्य, आर्य समाज मन्दिर नवांकोट, अमृतसर

परमपिता परमात्मा सर्वज्ञ तथा सम्पूर्ण हैं परन्तु मनुष्य अल्पज्ञ तथा अपूर्ण है। जन्म से लेकर मरण तक मनुष्य को एक दूसरे का सहारा लेना पड़ता है। बचपन में माँ की ममता का सहारा, फिर उंगली पकड़ कर लिया पिता का सहारा, जब जवान हुए तो फिर एक लड़की का सहारा और फिर जब बुढ़ापा आ गया तो लिया सन्तान का सहारा। यहां पर ही बस नहीं, जब मृत्यु हो गई तब चार भाईयों का सहारा लेकर पहुँच गये शमशानघाट। संसार में कोई भी ऐसा व्यक्ति पैदा नहीं हुआ जिसको कभी किसी के सहारे की ज़रूरत न पड़ी हो। यह केवल मनुष्य के साथ ही नहीं, वास्तव में संसार की कोई भी वस्तु सहारे के बिना रह नहीं सकती। दुकानदार को ग्राहक का सहारा है। फैक्ट्री को मज़दूर का सहारा और मज़दूर को फैक्ट्री का, किसी को भूमि की आय का सहारा, किसी को मकान से मिलने वाले किराये का सहारा, किसी को अपनी नौकरी का सहारा, किसी को बेटे बेटी का सहारा, किसी को माँ बाप का सहारा, पति पत्नी का सहारा। भाई बन्धु, रिश्तेदार सब सहारे हैं परन्तु ये सहारे कच्चे हैं। आज हैं कल नहीं रहेंगे। सहारा वो जो जन्म जन्मातरों तक साथ रहे।

हर कोई अपने से बड़े तथा अपने से अधिक शक्तिशाली का सहारा ढूंढता है। तू आत्मा है और तुझ से बड़ा है परमात्मा, उसे अपना सहारा बना ले, तुझे अमृत मिलेगा। प्रार्थना के तीसरे मन्त्र में कहा है-यस्य छायाऽमृतम् जिसका आश्रय ही मोक्ष सुखदायक है। जिसने ऐसे ईश्वर को अपना आधार नहीं बनाया वह मनुष्य कभी मनुष्य नहीं बनता राक्षस बन जाता है। प्रार्थना के दूसरे मन्त्र में कहा-स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमाम्-ऋ-इसमें पृथ्वी और द्युलोक का वर्णन है जो अरबों मीलों में फैले हुए हैं। इनको भी परमात्मा का आधार चाहिये, सहारा चाहिए। सूर्य, चन्द्रमा नक्षत्र आदि भी प्रभु के सहारे के बिना नहीं चल सकते।

एक महाशय मकान बनाना चाहते हैं। यदि मकान की नींव गहरी और सुदृढ़ होगी तो उस पर बहुत मंज़िला मकान आसानी से बनाया जा सकता है। यदि आधार सुदृढ़ है तो मकान सुरक्षित है। गुरू नानक देव जी ने भी कहा है-नानक दुखिया सब संसार, सो सुखिया जो नाम आधार अर्थात्-जिस ने प्रभु नाम को जीवन का आधार बना लिया है वही व्यक्ति सुखी है। प्रभु ने वेदवाणी के अन्दर कहा है कि श्रमेण तपसा सृष्टा-अथर्व-हे मानव तू इस संसार में परिश्रम, तप करने के लिये आया है, निकम्मा बैठने के लिये नहीं। यह जीवन युद्धक्षेत्र है, कोई विश्राम स्थली नहीं। यहां लगातार संघर्ष करना पड़ता है। यदि परिश्रम नहीं करोगे तो जीवन का आधार अथवा सहारा खिसक जायेगा। अपने आप को अपने से बड़े और शक्तिशाली से जोड़ो अर्थात् परमात्मा से अपना नाता जोड़ो। वेद ने ईश्वर को संसार की नाभि कहा है। उसी के आधार पर, उसी के सहारे सारा ब्रह्माण्ड चल रहा है।

आज मानव के साथ सबसे बड़ी समस्या यह है कि उसने असली सहारे को छोड़ दिया है। जो स्वयं सहारा ढूंढते हैं उन्हें अपना सहारा समझ लिया है। क्या कोई मूर्ति, कब्र अथवा कोई व्यक्ति विशेष यज्ञ सहारा बन सकता है ? ये सब आज नहीं तो कल, नष्ट होने वाले हैं। फिर वास्तविक सहारा कौन सा है ? ये मूर्तियां बहुत देर तक नहीं रहती, टूट जाती हैं। यदि न टूटेंगे स्वयं पानी में बहा देते हैं। श्री गुरू गोबिंद सिंह जी ने ठीक ही कहा था, ''जो मूर्तियां अपने लिये कुछ नहीं कर सकती, वे तुम्हारे लिये क्या करेंगी ? जब जहांगीर की मुगल सेनाओं ने सोमनाथ मन्दिर पर आक्रमण किया तो मन्दिर के पुजारी, सारे हाथ पर हाथ धर कर बैठे रहे कि भगवान् स्वयं यवनों को मार डालेंगे। मुगल सेना मार काट करती हुई आई और मूर्तियों को तोड़ फोड़ कर सब सोना, चांदी, हीरे, जवाहरात लूट कर ले गये। मूर्तियों ने किसी का बाल तक बांका नहीं किया। बेजान मूर्तियों का सहारा कोई सहारा नहीं। महर्षि कहते हैं कि देश की गुलामी का एक कारण मूर्ति पूजा भी था क्योंकि मूर्ति पूजा इन्सान को निकम्मा और आत्मबल हीन बना देती है। अत: कभी भी मूर्ति का सहारा लेकर न चलो। सदा परमात्मा को अपने अंग संग लेकर चलो।

सत्यार्थ प्रकाश के सातवें और नौवें सम्मुलास में महर्षि लिखते हैं-मनुष्य जब कोई उत्तम काम करने का विचार करता है तो उसके अन्दर एक उत्साह, आनन्द और साहस उत्पन्न होता है। जब कोई बुरा काम करने को तैयार होता है तो उसके मन में शंका, भय और लज्जा उत्पन्न होती है। महर्षि लिखते हैं-यह जीवात्मा की ओर से नहीं अपितु परमात्मा की ओर से है। प्रत्येक व्यक्ति के भीतर बैठा परमात्मा उत्तम काम करने वाले को कहता है कि तू आगे बढ़, अच्छा काम है अवश्य कर, तुझे प्रसन्नता होगी तथा बुरे काम करने वाले को भी कहता है कि न कर, पकड़ा जायेगा। दुख कष्ट और अपमान होगा। परमात्मा की आवाज़ सब के अन्दर गूँजती है। सब को प्रेरणा देती है परन्तु इस प्रेरणा का काम उसका होता है जिसने परमात्मा को जीवन आधार अथवा सहारा बना लिया हो।

गायत्री मन्त्र में एक शब्द आता है-वरेण्यम्। इसमें भक्त भगवान् को कहता है कि मैंने तुझे वर लिया, तुझे अपना बना लिया। मैं तेरा हो गया और तू मेरा हो गया। मैं तुम्हें वरता हूँ। आज से सिवाय तेरे, मेरा और कोई सहारा, साथी नहीं। संस्कार विधि में कहा कि बच्चे की जिव्हा पर ''ओ३म् लिखो और उसके कान में कहो-वेदोऽसि, पिता अपने बच्चे को आशीर्वाद देता हुआ कहता है-अब किसी बात से घबराना नहीं। संसार में जितने भी सहारे हैं वे सब रास्ते में ही छूट जाते हैं। सच्चा सहारा परमात्मा का है, इससे बड़ा सहारा कोई भी नहीं। जीवन में कितनी भी मुसीबतें, कष्ट क्लेश क्यों न आयें, इस सहारे को कभी छोड़ना नहीं। जिसके भीतर प्रभु प्रेम की ज्योति जगमगाती है, जो उसका सहारा ले लेता है, वह कभी डरता नहीं घबराता नहीं। चाहे कितने तूफान, भूकम्प, आधियां क्यों न आयें, भक्त कहता है कि मेरी ममतामयी माँ ही मेरा सच्चा साथी व सहारा है। उनके होते मेरा बाल भी बांका नहीं हो सकता। वह प्राणाधार, सर्वशक्तिमान मेरी रक्षा अवश्य ही करेगा। किसी कवि ने बहुत ही सुन्दर कहा है-

इक ओ३म् दा सहारा रख बंदिया,
भावें ओंण मुसीबतां लख बंदिया।

ध्यान से मन होता है अन्तर्मुखी

आर्य समाज विज्ञान नगर का साधना एवं ध्यान योग शिविर

ध्यान से मन होता है अर्न्तमुखी। यह बात ध्यान योग विशेषज्ञ अरविंद पाण्डेय ने आर्य समाज विज्ञान नगर कोटा में आयोजित शिविर में विभिन्न ध्यान मुद्राओं के माध्यम से मन को अंतर्मुखी बनाने की विधियों के क्रियात्मक अभ्यास के अवसर पर कही। उन्होंने साधकों से कहा कि मन की वृत्तियों से काम, क्रोध, मद, मोह एवं अहंकार आदि दुष्ट प्रवृत्तियों को दूर किया जा सकता है।

साधना शिविर में संध्या का क्रियात्मक अभ्यास कराते हुए आचार्य अग्निमित्र शास्त्री ने कहा कि प्रात: तथा सायंकाल संधिवेला के अवसर पर ईश्वर का ओंकार की ध्वनि के साथ ध्यान संध्या कहलाता है।

इस अवसर पर मंच पर पतंजलि योग समिति के विवेक गर्ग भी उपस्थित थे।

कार्यक्रम में आर्य समाज के ज़िला प्रधान अर्जुनदेव चड्ढा, आर्य समाज विज्ञान नगर के प्रधान जे. एस. दुबे, मंत्री राकेश चड्ढा, डा. के. एल. दिवाकर, रामप्रसाद याज्ञिक, अशोक अग्निहोत्री, भगवान पाण्डेय, सुनील दुबे, अनिता शर्मा उपस्थित थे।

आर्य समाज विज्ञान नगर के मंत्री राकेश चड्ढा ने बताया कि कार्यक्रम का आरम्भ ईश्वर भक्ति के भजन ''ध्यान किए जा गुणगान किए जा और मन से ओम का जाप किए जा'' से हुआ। शिविर में महिला एवं पुरुष साधकों के साथ बाल साधकों ने भाग लिया।

-राकेश चड्ढा

पुण्य स्मृति पर भव्य यज्ञ का आयोजन

आर्य समाज महर्षि दयानन्द बाजार (दाल बाजार) में दिनांक: 25.05.2014 को आर्य समाज के प्रचारक व भजनोपदेशक स्व. कृपाराम आर्य जी की 7वीं पुण्य स्मृति में भव्य यज्ञ का आयोजन किया गया जिसके यज्ञमान स्व. कृपाराम जी के बेटी एवं दामाद श्री महिन्द्रपाल विग धर्मपत्नी श्रीमति यशोदा रानी एवं श्रीमति निर्मला रानी, श्री सुभाष चन्द्र जी एवं श्रीमति उर्मिला रानी एवं श्री केवल कृष्ण, श्रीमति रानी बाला एवं श्री अश्वनी कुमार रहे। यज्ञ के उपरान्त स्व. कृपाराम जी के जीवन के कुछ संस्मरण सुना कर उन्हें श्रद्धांजलि दी गई। श्रद्धांजलि देने वालों में श्री आत्म प्रकाश वर्तमान प्रधान आर्य समाज दाल बाजार, श्री अश्विनी महाजन, श्री रमाकान्त महाजन, श्री देवपाल आर्य उपप्रधान आर्य समाज दाल बाजार, श्री सुभाष जी अबरोल, श्री ओम प्रिय चावला, श्री सुरेश चड्ढा, श्री कुलदीप राय, श्री अरूण सूद, श्री सुरेन्द्र टण्डन आदि आर्यों ने उनके जीवन पर प्रकाश डालते हुये कहा की स्व. कृपाराम जी व्यक्तित्व के धनी थे वे आर्य समाज के प्रचार, प्रसार को अपने जीवन का आधार मानते थे उन्होंने कितने ही नौजवानों को नास्तिकता की दल-दल से निकालकर आस्तिकता के पथ पर चलाया वे छोटे-छोटे बच्चों से बहुत प्रेम करते थे और स्कूल कालेजों में जाकर आर्य समाज का प्रचार करते थे। स्कूल के बच्चों को राष्ट्रीय भक्ति के भजन, प्रभु भक्ति के भजन एवं महर्षि दयानन्द के भजन सिखाते थे और उन बच्चों को हारमोनियम भी सिखाते थे। उन्हें आर्य समाज के उत्सवों में एवं साप्ताहिक सत्संगों में ले जाकर उनसे भजन गवाते थे। आज भी उनके सिखायें हुये बच्चें उच्चपदों पर सेवारत है। स्व. श्री कृपाराम जी के अन्दर शिष्ठता, सज्जनता, मधुरता, नम्रता, प्रसन्नता आदि बहुत से सदगुण थे। उन्होंने परिवार की पृष्ठभूमि को वैदिक संस्कारों से सींचा था। अपनी चारों बेटियों को वैदिक संस्कारों का चिन्तन देकर सुयोग्य बनाया था जो आज भी आर्य समाज की निरन्तर सेवा कर रही हैं। उनके सबसे बड़े दामाद महेन्द्रपाल विग आर्य समाज, दाल बाजार के वर्तमान मंत्री हैं। यज्ञ के ब्रह्मा श्री पंडित कर्मवीर शास्त्री ने अपने वक्तव्य में कहा कि हमें महापुरूषों के जीवन से प्रेरणा लेकर अपने जीवन को सफल एवं सार्थक बनाने का संकल्प लेना चाहिए क्योंकि महापुरूषों का जीवन अनुकरणीय होता है, जो व्यक्ति श्रेष्ठ पुरूषों से प्रेरणा लेकर पवित्र आचरण एवं सत्य निष्ठा से पुरूषार्थ करते हुए ईश्वर का धन्यवाद करके प्रगति के पथ पर अग्रसर होते हैं वे अपनी मंजिल को सुगमता से प्राप्त कर लेते है। क्योंकि उनको कर्त्तव्य परायणता का बोध प्राप्त हो जाता है उनके विचारों में पवित्रता आ जाती है उनका अन्त:करण पवित्र तथा महान बन जाता है। उनके अन्दर की कुटिल भावना एवं आसुरी प्रवृत्ति समाप्त हो जाती है। उनका चरित्र ऊँचा बन जाता है तथा सोच सकारात्मक हो जाती है। आओ हम सब मिल कर अपने जीवन को सार्थक बनाने के लिए पवित्र व्यक्तित्व एवं आप्त पुरूषों का ही अनुकरण करें।

शान्ति पाठ के पश्चात् जलपान का वितरण महेन्द्रपाल विग के परिवार की ओर से किया गया। **-मन्त्री महिन्द्र पाल विग**

दसवीं का परिणाम शत प्रतिशत

पंजाब स्कूल शिक्षा बोर्ड द्वारा घोषित किए गए दसवीं कक्षा के परीक्षा का स्थानीय आर्य माडल सी.सै. स्कूल, बठिण्डा के विद्यार्थियों ने अच्छे अंक प्राप्त कर स्कूल व माता-पिता का नाम रोशन किया। यह जानकारी देते हुए प्रिंसीपल विपिन गर्ग ने बताया कि स्कूल की छात्रा नीशा, 650 में से 603 अंक प्राप्त कर पहला स्थान प्राप्त किया और जाहनवी ने 586 अंक व हीतेश ने 571 अंक प्राप्त कर दूसरा व तीसरा स्थान प्राप्त किया है। प्रधान श्री पी.डी. गोयल ने सभी बच्चों व माता-पिता को इस उपलब्धि पर बधाई दी। इस मौके पर स्कूल के सचिव श्री जगदीश राय बांसल, कोषाध्यक्ष श्री नवनीत कुमार, श्री गौरी शंकर एवं रमेश गर्ग उपस्थित थे। **-प्रिंसीपल**

रन फोर विजडम का आयोजन

महर्षि दयानन्द सरस्वती की जयन्ती के अवसर पर श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थप्रकाश न्यास द्वारा आयोजित ''रन फोर विजडम'' का आयोजन किया गया। उक्त दौड़ दूध तलाई से प्रारंभ हुई और नवलखा महल पर समाप्त हुई। शहर के विभिन्न विद्यालयों के लगभग ८०० विद्यार्थी एवं आर्यसमाज के १०० परिजनों ने उत्साहपूर्वक भाग लिया। दौड़ को ग्रामीण विधायक श्री फूल चन्द मीणा, राजीवगांधी जनजातीय विश्वविद्यालय के कुलपति श्रीमान टी. सी. डामोर साहब एवं न्यास के कार्यकारी अध्यक्ष श्री अशोक आर्य द्वारा हरी झण्डी दिखाकर प्रारंभ किया गया। ग्रामीण विधायक श्री फूलचन्द मीणा ने अपने उद्बोधन में हर बालक को शिक्षा प्रदान कराना हम सबका प्रथम कर्तव्य बताया। उन्होंने कहा कि कोई भी बालक शिक्षा से वंचित नहीं रहना चाहिये। साथ ही महर्षि दयानन्द की शिक्षाओं को अपनाते हुए अंधविश्वास व पाखण्ड को समाज से पूर्ण रूप से हटाने की आवश्यकता पर बल दिया। कार्यक्रम के मुख्य संयोजक डॉ. अमृत लाल तापडिया ने रैली के उद्देश्य के बारे में बताया। संयोजक श्री संजय शांडिल्य ने विस्तृत दिशा निर्देश प्रदान किये।

दौड़ के समापन पर सभी प्रतिभागी नवलखा महल के बाहर एकत्र हुए। समूह को न्यास के कार्यकारी अध्यक्ष श्री अशोक आर्य द्वारा संबोधित करते हुए महर्षि दयानन्द की शिक्षाओं एवं निर्देशों से अवगत कराया गया। श्री आर्य ने सृष्टि के नियम को सत्य व असत्य का निर्धारण का आधार बताया। साथ ही बच्चों को पाखण्ड व अंधविश्वास से सर्वथा दूर रहने हेतु विस्तार से निर्देशित किया। नवलखा महल व न्यास द्वारा नियमित रूप से किये जाने वाले विभिन्न आयोजनों के बारे में बताया एवं नवलखा महल में निर्मित चित्र दीर्घा के अवलोकन हेतु प्रेरित किया। इस अवसर पर प्रत्येक प्रतिभागी को एक किट प्रदान किया गया जिसमें अल्पाहार के साथ महर्षि दयानन्द सरस्वती की जीवनी, एवं नवलखा महल एक परिचय आदि पुस्तकों का समावेश रहा। अंत में न्यास के मंत्री श्री भवानीदास आर्य द्वारा धन्यवाद ज्ञापित किया गया।

-सुरेश चन्द पाटोदी व्यवस्थापक-न्यास

ओमानन्द वैदिक छात्रावास नुआगां में आर्य वीर दल शिविर एवं वार्षिक महोत्सव सम्पन्न

कन्धमाल ज़िले के ईसाई बहुल क्षेत्र में ओमानन्द वैदिक छात्रावास गुरुकुल आश्रम आमसेना की ओर से संचालित है। इस छात्रावास में लगभग 50-60 निर्धन, आदिवासी बालक अध्ययनरत हैं।

3 मई से 9 मई तक युवाओं के लिए युवा चरित्र निर्माण शिविर का आयोजन किया गया था जिसमें 100 के लगभग युवाओं ने उत्साहपूर्वक भाग लिया। इस शिविर में वैदिक सिद्धान्तों की शिक्षा के साथ योगासन, प्राणायाम, जूडो-कराटे, लाठी-चालन एवं वैदिक धर्म की भी शिक्षा दी गई।

9 मई को वार्षिक महोत्सव का भी आयोजन हुआ जिसमें दूर-दूर से आर्य सज्जनों ने यज्ञ में भाग लिया। यज्ञोपरान्त 200 माताओं को एवं बुजुर्गों को साड़ी एवं धोती आदि वितरण किया गया।

सायंकाल कन्धमाल के सभी आर्यों का स्वामी धर्मानन्द जी की अध्यक्षता में एक अधिवेशन भी रखा गया। इस अवसर पर आशीर्वाद देने के लिए पूज्य स्वामी धर्मानन्द जी सरस्वती, पंडित विशिकेशन जी शास्त्री, आचार्य मनुदेव वाग्मी, स्थानीय समाजसेवी कृष्णमोहन पाणीग्राही आदि उपस्थित थे।

3 मई से यज्ञ एवं कार्यक्रम का संचालन पंडित विशिकेशन जी शास्त्री ने किया। शिविर एवं महोत्सव की सम्पूर्ण व्यवस्था आचार्य श्रद्धानन्द जी ने की। युवाओं को प्रशिक्षण गुरुकुल के सुयोग्य स्नातक तेजराज जी एवं ब्र. निरंजन जी शास्त्री ने दी। कार्यक्रम ऋषि लंगर के साथ 9 मई को सायंकाल सम्पन्न हुआ।

-गुरुकुल आश्रम आमसेना

वेदवाणी

धन का सदुपयोग

पृणीयादिन्नाधमानाय तव्यान् द्राघीयांसमनु पश्येत पन्थाम्।
ओ हि वर्तन्ते रथ्येव चक्रान्यमन्युप तिष्ठन्त रायः।।

-ऋ. 10/117/5

__विनयः__ धन को जाते हुये कितनी देर लगती है? व्यापार में घाटा हो जाता है, चोर लुटेरे धन लूट ले जाते हैं, बैंक टूट जाते हैं, घर जल जाता है आदि सैंकड़ों प्रकार से लक्ष्मी मनुष्य को क्षणभर में छोड़ कर चली जाती है। वास्तव में लक्ष्मीदेवी बड़ी चंचल है। वह मनुष्य कितना मूर्ख है जो यह समझता है कि बस, यदि मैं दूसरों को धन दान नहीं करूंगा तो और किसी प्रकार मेरा धन मुझ से पृथक नहीं हो सकेगा। अरे, धन तो जब समय आएगा तो एक पलभर में तुझे कंगाल बना कर कहीं चला जायेगा। इसलिये हे धनी पुरुष? यदि इस समय तेरे शुभकर्मों के भाग से तेरे पास धन सम्पत्ति आई हुई है तो तू इसे यथोचित- दान में देने में कभी संकोच मत कर। जीवन मार्ग को तनिक विस्तृत दृष्टि से देख और सत्पात्र को दान देने में अपना कल्याण समझ, अपनी कमाई समझ। सच्चा दान करना, सचमुच जगत्पति भगवान को उधार देना है जो बड़े भारी दिव्य सूद के साथ फिर वापस मिलता है। जो जितना त्याग करता है वह उससे न जाने कितना गुणा अधिक प्रतिफल पाता है, यह ईश्वरीय नियम है। दान तो संसार का महान् सिद्धान्त है, पर इस इतनी साफ बात को यदि लोग नहीं समझते हैं तो इसका कारण यह है कि वे मार्ग को दूर तक नहीं देखते। जीवन मार्ग कितना लम्बा है, यह संसार कितना विस्तृत है और इस संसार में जीवों को उनके कब के शुभ अशुभ कर्मों का फल उन्हें कब मिलता है, यह सब कुछ नहीं दिखाई देता। इसीलिये हमें संसार में चलते हुये वे अटल नियम भी दिखाई नहीं देते जिनके अनुसार सब मनुष्यों को उनके शुभ अशुभ कर्मों का फल उन्हें कब मिलता है, यह सब कुछ नहीं दिखाई देता। इसीलिये हमें संसार में चलते हुये वे अटल नियम भी दिखाई नहीं देते जिनके अनुसार सब मनुष्यों को उनके शुभ अशुभ कर्मों का फल अवश्यमेव भोगना पड़ता है। यदि इस संसार की गति को हम तनिक भी ध्यान से देखें तो पता चलेगा कि धन सम्पत्ति इतनी अस्थिर है कि यह रथचक्र की भान्ति घूमती फिरती है। आज इसके पास है तो कल दूसरे के पास है, परन्तु हम अति क्षुद्र दृष्टिवाले हैं और इसीलिये इस आज में ही इतने ग्रस्त हैं कि हम कल को देखते हुये भी नहीं देखते हैं। संसार में लोगों का नित्य धननाश होता हुआ देखते हुये भी अपने धन नाश के एक पल पहले तक भी हम इस घटना के लिये कभी तैयार नहीं होते और इसीलिये तनिक सा धननाश होने पर इतने रोते चीखते भी हैं। यदि हम मार्ग को विस्तृत दृष्टि से देखें तो इन धनागमों और धन नाशों को अत्यन्त तुच्छ बात समझें। यदि संसार में प्रतिक्षण चलायमान, घूमते हुये, इस धन चक्र को देखें इस बहते हुये धनप्रवाह को देखें, तो हमें धन जमा करने का तनिक भी मोह न रहे।

साभार वैदिक विनय प्रस्तुति-रणजीत आर्य

गुरुकुल का आयुर्वेद महान
घर-घर में मिले रोगों से निदान

गुरुकुल च्यवनप्राश
सभी के लिए स्वादिष्ट, रुचिकर, पौष्टिक रसायन।

गुरुकुल पायोकिल
पायोरिया की आयुर्वेदिक औषधि
दांतों में खून रोके, मुंह की दुर्गन्ध दूर करे, मसूड़ों के रोग, ढीले दांत ठीक करे।

गुरुकुल शतशिलाजीत सूर्यतापी
पुष्टीदायक, बलवर्धक
शरीर में नया खून और उत्साह का अनुभव

गुरुकुल मधु
गुणवत्ता एवं ताजगी के लिए

गुरुकुल चाय
खाँसी, जुकाम, इन्फ्लूएंजा व थकान में अत्यंत उपयोगी।

गुरुकुल ब्राह्मी रसायन
बुद्धिवर्धक, स्फूर्तिदायक, दिमागी कमजोरी दूर करे।

गुरुकुल मधुमेह नाशिनी गुटिका
मधुमेह एवं प्रत्येक प्रकार के प्रमेह में लाभदायक

अन्य प्रमुख उत्पाद
गुरुकुल द्राक्षारिष्ठ
गुरुकुल रक्तशोधक
गुरुकुल अश्वगंधारिष्ट

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी, हरिद्वार डाकघर : गुरुकुल कांगड़ी-249404, ज़िला-हरिद्वार (उत्तरांचल) फोन : 0134-416073

शाखा कार्यालय : 63, गली राजा केदार नाथ, चावड़ी बाज़ार, दिल्ली-6, फोन : 23261871